माननीय न्यायमूर्ति हेमंत गुप्ता के समक्ष

एस्टेट अधिकारी, हुडा, पंचकुला व अन्य

— याचिकाकर्ता

बनाम

दरियाद हन सिंह

— उत्तरदाता

***2009* की R.S.A. संख्या 2317**

17 सितंबर, 2009

भारत का संविधान, *1950*- अनुच्छेद *226*—हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण अधिनियम, *1977*—धारा *17* व *50*—निचले न्यायालयों ने पुनर्ग्रहण के आदेश को अवैध, अशक्त व शून्य माना है—उसे चुनौती दी गयी—क्या *1977* अधिनियम की धारा *5* के संदर्भ में सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित है—वादी मुकदमा दायर करने से पहले प्रारंभिक जमा के बाद किसी भी किस्त को जमा करने में विफल रहता है— आवंटन पत्र के नियमों और शर्तों का उल्लंघन - वादी कानून या इक्विटी में किसी भी तरह की छूट की मांग नहीं कर सकता - *1977* अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पारित बहाली के आदेश को केवल *18%* ब्याज के दावे के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता था - धारा *50* के संदर्भ में सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार की वर्जना लागू होगी - शेष बिक्री विचार के भुगतान में चूक करने वाला वादी फिर से शुरू करने के आदेश को चुनौती देते समय किसी भी घोषणा का हकदार नहीं है और न ही किसी निषेधाज्ञा का हकदार है।

यह निर्धारित किया गया कि इसमें कोई शक़ नहीं है कि अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पारित आदेश निरर्थक है। इसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं बताया गया है। यह वादी-प्रतिवादी को सुनवाई का अवसर देने के बाद पारित किया गया साबित होता है। इसलिए विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा स्वयं को एक अपीलीय प्राधिकरण समझकर इस मामले पर अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं किया जा सकता था।

(पैरा 16)

इसके अलावा, यह माना गया कि ट्रायल कोर्ट द्वारा बहाली के आदेश को रद्द करने के लिए दिया गया तर्क अस्थिर है। तथ्य यह है कि वादी ने 25% की प्रारंभिक जमा राशि के अलावा मुकदमा दायर करने से पहले 20,000 रुपये की राशि को छोड़कर कोई भी किस्त जमा नहीं की है।यह आवंटन पत्र के नियमों और शर्तों का उल्लंघन था, जिसमें छह माही आधार पर किश्तें जमा करने की बात कही गई थी। ब्याज दर से संबंधित विवाद एक दिखावा है। यह तब समझा जा सकता था जब वादी ने 10% की दर से ब्याज सहित मूल राशि जमा कर दी हो ताकि 18% ब्याज दर लगाने के प्रतिवादी के दावे पर विवाद खड़ा हो सके। लेकिन वर्तमान में ऐसा मामला है जहां वादी ने आवंटन पत्र के संदर्भ में एक भी किस्त जमा नहीं की है। इसलिए वादी कानून या इक्विटी में किसी भी तरह की छूट की मांग नहीं कर सकता है।

(पैरा 18)

आगे माना गया कि अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पुनर्ग्रहण का आदेश केवल *18%* ब्याज के दावे के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता था। इसलिए, अधिनियम की धारा *50* के संदर्भ में सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार की बाधा लागू होगी।चूंकि वादी ने शेष बिक्री प्रतिफल के *75%* के भुगतान में चूक की है इसलिए वह किसी भी घोषणा का हकदार नहीं है। पुनर्ग्रहण आदेश पारित होने से पहले वादी ने शेष बिक्री प्रतिफल के भुगतान के बिना लगभग *8* वर्षों तक विचाराधीन संपत्ति पर कब्ज़ा किया। इस प्रकार वादी बहाली के आदेश को चुनौती देने वाली घोषणा का हकदार नहीं है और न ही किसी निषेधाज्ञा का हकदार है।

(पैरा 20)

सचिन कपूर,अधिवक्ता,अपीलकर्ता के लिए

एच. एस. सेठी. अधिवक्ता, प्रतिवादी के लिए

हेमंत गुप्ता, जे. (मौखिक)

1. प्रतिवादी दूसरी अपील में वादी को आवंटित बूथ के संबंध में निचली अदालतों द्वारा दिए गए फैसले और डिक्री के खिलाफ व्यथित हैं।

2. वादी-प्रतिवादी, बूथ संख्या 93,सेक्टर 9, पंचकुला के संबंध में 3,72,000/-रुपये की राशि में सबसे अधिक बोली लगाने वाला था। वादी द्वारा बोली राशि का 10% यानि 37,200 रुपये मौके पर ही जमा कर दिया गया।उसके बाद 15 जून,2008 को आवंटन पत्र जारी किया गया। 55,800 रुपये की राशि वादी द्वारा उक्त पत्र जारी होने की तारीख से 30 दिनों के भीतर जमा किए गए थे। 2,79,000 रुपये का शेष पत्र जारी होने की तारीख से 60 दिनों के भीतर या 10 अर्धवार्षिक किस्तों में जमा किये जा सकते हैं। वादी ने निर्धारित समय के भीतर 55,800 रुपये की राशि जमा की। बूथ का भौतिक कब्ज़ा वादी द्वारा 28 अप्रैल,1993 को प्राप्त किया गया था। वादी ने 5 सितंबर,1993 को 20,000.रुपये की राशि जमा की।

3. वादी ने 22 जनवरी, 2001 को हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1977 [संक्षेप में 'अधिनियम'] की धारा 17 के तहत प्रतिवादियों द्वारा शुरू की गई कार्यवाही को चुनौती देते हुए घोषणा के लिए एक मुकदमा दायर किया,मुख्य रूप से इस आधार पर कि सबसे पहले, प्रतिवादी न. 2 को यदि आवंटन के नियमों और शर्तों का कोई उल्लंघन हुआ था तो दंड लगाना चाहिए था और वह भी वादी को सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद।अधिनियम की धारा 16 के संदर्भ में यह भी दावा किया गया था कि आवंटी के लिए देय राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल किया जा सकता है और अधिनियम की धारा 17(4) के तहत शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। यह भी दलील दी गई कि प्रतिवादी नंबर 2 ने पिछली किश्तों पर अवैध रूप से 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज लगाया है जो कि अवैध है और केवल 10% प्रति वर्ष ब्याज का दावा किया जा सकता है।

4. मुकदमे के साथ अंतरिम क्षेत्राधिकार के एजेंट के लिए एक आवेदन भी संलग्न था। ट्रायल कोर्ट ने 27 जनवरी, 2001 को कब्जे की यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया। 26 अप्रैल, 2001 को संपदा अधिकारी ने बहाली का आदेश पारित किया। बहाली का ऐसा आदेश पारित होने के बाद, वादी ने 7 जून,2001 के आवेदन के माध्यम से वाद में संशोधन की मांग की ताकि संपदा अधिकारी द्वारा पारित उपरोक्त आदेश को चुनौती दी जा सके। मांगे गए संशोधन की अनुमति दी गई। इसके बाद, प्रतिवादी ने लिखित बयान दायर किया और मुकदमा लड़ा। मुकदमे का फैसला नीचे की अदालतों द्वारा किया गया था जिनके तहत फैसले और डिक्री को वर्तमान अपील में चुनौती दी गयी है।

5. 26 अप्रैल,2001 के आदेश(प्रदर्शनी आर. 17) के अनुसार, 19 अप्रैल, 1991 से 28 नवंबर, 2000 तक पंजीकृत डाक के तहत वादी को नौ नोटिस जारी किए गए थे और चूंकि वादी 17,72,000 रुपये की राशि जमा करने में विफल रहा था जो प्रतिवादियों को देय था, बूथ को फिर से शुरू करने का आदेश पारित किया गया था। वादी ने उपरोक्त आदेश को अपील में चुनौती दी। अपील खारिज कर दी गई -

आदेश दिनांक 27 जून, 2002 (प्रदर्शनी पी.18) के तहत। फिर भी व्यथित होकर, वादी ने अधिनियम की धारा 30(2) के तहत पुनरीक्षण दायर किया।

6. गौरतलब है कि अंतरिम निषेधाज्ञा के लिए आवेदन पर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वादी ने 6 दिसंबर, 2002 तक 3,75,000 रुपये की राशि जमा कर दी है लेकिन ब्याज जमा नहीं किया है, निचली अदालत ने 23 नवंबर, 2005 को एक आदेश पारित किया था।यह आदेश दिया गया कि यदि वादी सभी किस्तें 10% ब्याज के साथ जमा करता है, तो कोई पूर्वाग्रह नहीं होगा और इस सवाल पर कि प्रतिवादी विलंबित भुगतान पर 18% ब्याज ले सकता है या नहीं पक्षों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करने के बाद निर्णय लिया जाएगा। वादी को किश्तें जमा करने के लिए एक माह का समय दिया गया। उक्त आदेश के अवलोकन से यह नहीं पता चलता है कि पुनर्ग्रहण आदेश पारित करने, या अपील या पुनरीक्षण को खारिज करने का तथ्य निचली अदालत द्वारा देखा गया था।

7. ट्रायल कोर्ट ने पाया कि प्रतिवादी ब्याज की संविदात्मक दर के नियमों और शर्तों से बंधे थे और विलंबित भुगतान पर केवल 10% ब्याज ले सकते थे, इसलिए, प्रतिवादी केवल 10% ब्याज ले सकते हैं और उससे अधिक नहीं। नतीजतन, बहाली का आदेश अवैध, अमान्य और शून्य पाया गया। अपील में भी उक्त निष्कर्ष की पुष्टि की गई।

8. अधिनियम की धारा 50 के अनुसार सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार पर रोक के संबंध में आपत्ति के संबंध में यह पाया गया कि क्षेत्राधिकार तभी वर्जित होगा जब अधिनियम के तहत प्राधिकरण कानून के मापदंडों के भीतर कार्य करेगा और जब संबंधित प्राधिकरण कानून का उल्लंघन करेगा,इस ग़लती को सुधारने के लिए सिविल कोर्ट मामले में हस्तक्षेप कर सकता है।

9. दिनांक 7 जुलाई, 2009 के आदेश के अनुसार इस न्यायालय द्वारा कानून के निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रश्नों पर अपील स्वीकार कर ली गई :-

(1) क्या हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1977 की धारा 50 के संदर्भ में सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित है?

(2) क्या वादी घोषणा और निषेधाज्ञा का हकदार है, भले ही वह शेष बिक्री प्रतिफल के भुगतान में चूक कर चुका हो?

हालाँकि, अंतरिम राहत के लिए आवेदन पर विचार के चरण में, पक्षों के विद्वान वकील ने कहा कि अपील को ही सुनवाई के लिए लिया जाऐ।

10. पक्षों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, मेरी राय है कि 7 जुलाई, 2009 के आदेश के अनुसार ऊपर दिए गए कानून के महत्वपूर्ण प्रश्नों के अलावा, वर्तमान अपील में विचार के लिए कानून का निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रश्न भी उठेगा: -

क्या सिविल कोर्ट, न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते समय, अपील की अदालत के रूप में कार्य करेगा या स्वयं निर्णय लेने की जगह केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया की जांच करेगा?

11.अपीलकर्ता के विद्वान वकील का तर्क है कि सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार स्पष्ट रूप से वर्जित है। वादी का मामला यह नहीं है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का कोई उल्लंघन हुआ है या वादी को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना बहाली का आदेश पारित किया गया था। इन परिस्थितियों में, केवल ब्याज दर के आधार पर, बहाली के आदेश में सिविल कोर्ट द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता था। यह तर्क दिया गया है कि सिविल कोर्ट अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों पर न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए सिविल कोर्ट केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया की जांच करेगा, न कि निर्णय की। इसलिए, बहाली के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

12. इस न्यायालय की एक पूर्ण पीठ ने **हरियाणा राज्य और अन्य बनाम विनोद कुमार और अन्य (1)** [1]के रूप में रिपोर्ट किए गए फैसले में क्षेत्राधिकार की बाधा के प्रश्न की जांच की है जब क़ानून स्पष्ट रूप से इसे रोकता है। यह माना गया है कि सिविल कोर्ट के पास अभी भी अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों पर अधिकार क्षेत्र होगा यदि ऐसे आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करते हैं। फैसले के प्रासंगिक उद्धरण इस प्रकार हैं:-

"….इन दो परीक्षणों को लागू करने से ऐसा नहीं लगता है कि धारा 3(4) और धारा 16 में इस्तेमाल किए गए शब्द स्पष्ट हैं। धारा 16 में यह प्रावधान है कि इस अधिनियम के तहत दिए गए आदेश, जिस पर उक्त धारा लागू होती है, को किसी भी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा। यह सिविल न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को छोड़कर एक स्पष्ट प्रावधान है।धारा 3(4) स्पष्ट रूप से सिविल न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को बाहर नहीं करता है, लेकिन संदर्भ में, यह निष्कर्ष अपरिहार्य प्रतीत होता है कि सिविल न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को बाहर करने का इरादा है। इसलिए, हम संतुष्ट हैं कि श्री गोयल यह तर्क देने में सही हैं कि धारा 3(4) और धारा 16 के प्रावधानों के अंतर्गत शामिल आदेशों के अंतर्गत आने वाले मामलों के संबंध में सिविल न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को बाहर रखा गया है।

हालाँकि, इस निष्कर्ष का मतलब यह नहीं है कि जिला मजिस्ट्रेट, या आयुक्त, या राज्य सरकार द्वारा पारित आदेश की वैधता के खिलाफ याचिका कभी भी सिविल कोर्ट में नहीं उठाई जा सकती है। हमारी

---

(1) ए.आइ.आर 1986 P & H 406

राय में, सिविल न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को छोड़कर अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों द्वारा बनाई गई रोक उन मामलों में लागू नहीं हो सकती है जहां सिविल न्यायालय के समक्ष उठाई गई याचिका मामले की जड़ तक जाती है व यदि बरकरार रखी जाती है तो यह निष्कर्ष निकलेगा कि विवादित आदेश शून्यता है।

13.वर्तमान मामले में ऐसा कोई दावा नहीं है कि बहाली का आदेश पारित होने से पहले वादी को नोटिस नहीं दिया गया था। वास्तव में, वादी ने बहाली का आदेश पारित होने से पहले ही सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र का इस्तेमाल किया। उठाया गया विवाद केवल ब्याज दर को लेकर था। वास्तव में संचार (प्रदर्शनी पी. 16) से पता चलता है कि वादी को 28 नवंबर,2000 का नोटिस प्राप्त हुआ है और एक निकट संबंधी की मृत्यु के कारण स्थगन की मांग की है। आदेश पारित होने के बाद वादी ने अपील दायर की। ऐसी अपील की सुनवाई अपीलकर्ता के प्रतिनिधि की उपस्थिति में की गई। वादी द्वारा अपने वकील के माध्यम से पुनरीक्षण दायर किया गया था। इससे पता चलता है कि वादी का मामला यह नहीं था कि अपीलकर्ता को पर्याप्त अवसर उपलब्ध नहीं कराया गया।

14..**जी एम वर्स्टेड स्पिनिंग मिल्स (पी) लिमिटेड बनाम हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण, (2)** [2]और **ज्ञानी राम और अन्य बनाम ओमपति और अन्य (3)** के रूप में रिपोर्ट किऐ गये निर्णय स्थापित मामले में सहायक नहीं हैं क्योंकि ये वे मामले हैं जहां प्रभावित पक्षों को नोटिस नहीं दिए गए थे। **सुरिंदर सिंह वर्मी मुख्य प्रशासक, हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण, मनीमाजरा, (4)** और **वेद प्रकाश बनाम प्रशासन और अन्य, (5)** के रूप में रिपोर्ट किए गए निर्णय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिकाओं में दिए गए निर्णय हैं और इनकी कोई वर्तमान मामले में प्रयोज्यता नही है।**नियमित द्वितीय अपील संख्या 3204 ,2009|हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण और अन्य बनाम ओम प्रकाश शर्मा|** में पारित आदेश 4 सितंबर,2009 को तय हुआ जो सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की बाधा से संबंधित आपत्ति से निपटता नहीं है।

15..दूसरी ओर, **ईस्ट इंडिया कॉटन एमएफजी कंपनी लिमिटेड बनाम हरियाणा शहरी विकास प्राधिकरण फरीदाबाद((6)**के रूप में रिपोर्ट किए गए निर्णय में व 2007 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 457 में पारित आदेश दिनांक 13 फरवरी, 2007 [**सदा वंती और अन्य बनाम हरियाणा शहरी**

---

(2)1994 पी.एल.आर. 268
(3)2008 (1) पी.एल.आर. 811
(4)1996 (2) पी.एल.आर. 159
(5)1992 (2) आर.सी.आर. (किराए पर) 11

विकास प्राधिकरण और अन्य](7) [3] में यह माना गया है कि सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार अधिनियम की धारा 50 के संदर्भ में वर्जित है।

16.वर्तमान मामले में ऐसा कोई आरोप नहीं है कि अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पारित आदेश अमान्य है। इसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं बताया गया है। यह वादी-प्रतिवादी को सुनवाई का अवसर देने के बाद पारित किया गया साबित होता है। इसलिए, ट्रायल कोर्ट इस मामले पर अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं कर सकता था जैसे कि वह एक अपीलीय प्राधिकारी हो।

17.विद्वान ट्रायल कोर्ट ने केवल इस आधार पर बहाली के आदेश में हस्तक्षेप किया है कि 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान किया जाएगा। यह तर्कसंगत नहीं है क्योंकि डिडेंडेंट्स केवल 10% ब्याज वसूलने के हकदार हैं। रुचिरा सेरामिक्स बनाम एच.यू.डी.ए. और अन्य (7) पर निर्भरता दिखाते हुए विद्वान विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित आशय का निष्कर्ष निकाला है:

"उपरोक्त प्राधिकारी पर भरोसा करते हुए और वादी की ओर से विद्वान वकील द्वारा की गई दलील के मद्देनजर, मैंने पाया कि प्रतिवादी केवल 10% ब्याज ले सकते हैं और उससे अधिक नहीं। यह ज्ञान इंदर शर्मा बनाम हुडा, पीएलआर 2003 (1) (पी एंड एच) डी.बी. में निर्धारित किया गया है। माननीय पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा यह तय किया गया कि हुडा कानून के किसी भी प्रावधान,1978 का अधिनियम या विनियम या आवंटन पत्र में कोई भी शर्त को इंगित नहीं कर सकता है जो प्रतिवादी को विलंबित भुगतान पर चक्रवृद्धि ब्याज वसूलने के लिए अधिकृत करती है और साधारण ब्याज वसूलने का निर्देश देती है । इस मामले में हुडा एसएलपी में गया था, लेकिन उसे खारिज कर दिया गया था।

उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, मुद्दा संख्या 1,2 और 3 प्रतिवादियों के खिलाफ और वादी के पक्ष में तय किया जाता है।

18. विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा बहाली के आदेश को रद्द करने के लिए दिया गया तर्क अस्थिर है।तथ्ययह है कि वाद दायर करने से पहले वादी ने 25% की प्रारंभिक जमा राशि के बाद 20,000 रुपये की राशि को छोड़कर कोई भी किस्त जमा नहीं की है। यह आवंटन पत्र के नियमों और शर्तों का उल्लंघन था जिसमें अर्धवार्षिक आधार पर किश्तों को जमा करने पर विचार किया गया था। ब्याज दर के संबंध में विवाद एक दिखावा है। यदि वादी ने 10% ब्याज के साथ मूल राशि जमा कर दी होती यह समझा जा सकता था कि 18% ब्याज दर लगाने के प्रतिवादी के दावे पर विवाद खड़ा हो सकता है। लेकिन वर्तमान में यह

---

(6) 2003(3) पी.एल.आर 842

(7) (2002) 9 एससीसी 599

एक ऐसा मामला है जहां वादी ने आवंटन पत्र के संदर्भ में एक भी किस्त जमा नहीं की है। इसलिए, वादी कानून या इक्विटी में किसी भी तरह की छूट की मांग नहीं कर सकता है।

19.इस न्यायालय की डिविजन बेंच का फैसला जियान इंदर शर्मा [सुप्रा] मामले में 15% की दर से ब्याज के भुगतान को चुनौती देने वाली परमादेश की रिट से उत्पन्न हुआ है। उपरोक्त रिट याचिका में उठाया गया मुद्दा ब्याज लगाने का था न कि बहाली का। रुचिरा सेरामिक्स मामले [सुप्रा] में माननीय सुप्रीम कोर्ट ने हुडा की मांग के अनुसार संपूर्ण बकाया के भुगतान पर प्लॉट की बहाली का आदेश दिया है। इसके बाद पूर्व फैसले के मद्देनजर यह पाया गया कि हुडा 10% ब्याज का दावा करने का हकदार है और चूंकि आवंटी ने 18% ब्याज जमा कर दिया है इसलिए अतिरिक्त राशि वापस करने का आदेश दिया गया था। ब्याज दर के संबंध में विवाद बहाली के आदेश से स्वतंत्र रूप से उत्पन्न हुआ।

20. इस प्रकार, अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा पारित बहाली के आदेश को केवल ब्याज (ए) 18% के दावे के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता था। इसलिए, अधिनियम की धारा 50 के दसियों में सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार की बाधा लागू होगी। चूँकि वादी ने शेष बिक्री प्रतिफल के 75% के भुगतान में चूक की है, इसलिए वह किसी भी घोषणा का हकदार नहीं है। वादी ने पुनर्ग्रहण आदेश पारित होने से पहले शेष बिक्री भुगतान के बिना लगभग 8 वर्षों तक विचाराधीन संपत्ति पर कब्जा किया। इस प्रकार वादी बहाली के आदेश को चुनौती देने वाली घोषणा का हकदार नहीं है और न ही किसी निषेधाज्ञा का हकदार है।

21.वादी ने 26 अप्रैल, 2001 को पुनः आरंभ आदेश पारित होने के बाद शेष बिक्री प्रतिफल जमा कर दिया है। यह केवल 10% ब्याज है जो सिविल कोर्ट द्वारा पारित अंतरिम आदेशों के संदर्भ में जमा किया गया था। सिविल कोर्ट द्वारा पारित ऐसे अंतरिम आदेश सिविल कोर्ट को मुकदमे पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं करता है। निर्णय लेने की प्रक्रिया में कोई प्रक्रियात्मक अनियमितता या अन्य अवैधता नहीं है।

22. अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क दिया गया है कि ब्याज (ए), 18% का भुगतान फिर से शुरू करने के बदले में दावा किया गया है क्योंकि फिर से शुरू करना अंतिम उपाय है। 18% की दर से ब्याज का दावा एक आवंटी को ऐसी राशि के भुगतान पर प्लॉट को फिर से शुरू करने से बचने के लिए प्रदान किया गया एक अवसर है। अत: उक्त दावे को अनुचित नहीं कहा जा सकता। **सचिव, भुवनेश्वर विकास प्राधिकरण बनाम सुशांत कुमार मिश्रा (8)** [4]पर निर्भरता रखते हुए इसे निम्नलिखित प्रभाव में

---

[4](8) (2009) 4 एस.सी.सी 684

रखा गया था:-

"13 इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब पूरी तरह से डिफ़ॉल्ट किस्त ब्याज के अधीन होती है, तो डिफ़ॉल्ट किस्त का घटक 'ब्याज' भी ब्याज के अधीन होता है। उस सीमित सीमा तक ब्याज पर ब्याज लगाया जा सकता है। किस्त के भुगतान में चूक होने पर, किस्त के ब्याज वाले हिस्से पर चूक की तारीख से उचित दर पर इस तरह के ब्याज को वसूलने को संपूर्ण बकाया के संबंध में ,चक्रवृद्धि ब्याज वसूलने के रूप में नहीं कहा जा सकता है। यह केवल यह सुनिश्चित करने के लिए है कि बकाया (किश्तों) का भुगतान तुरंत किया जाए और किस्तों में पेनिटिंग भुगतान द्वारा दी गई रियायत के दुरुपयोग से बचा जाए। लेकिन इस तरह के प्रावधान के लिए पट्टेदार/आवंटियों को, जिन्हें पहले ही कब्जा दे दिया गया है, भुगतान में देरी करने का प्रलोभन दिया जाएगा, जिससे परिणाम स्वरूप निरंतर चूक होती है। कोई वैधानिक विकास प्राधिकरण, जो बिना लाभ-हानि के आधार पर काम कर रहा है, पट्टेदारों/आवंटियों द्वारा इस तरह की निरंतर चूक की अनुमति देने में असमर्थ है, जो उनके कामकाज को पंगु बना देगी, जिससे अन्य लोगों के लाभ के लिए भविष्य की विकासात्मक गतिविधियाँ प्रभावित होंगी।"

23.अन्य मुद्दों पर पहले ही आ चुके निष्कर्षों को देखते हुए उक्त तर्क की और जांच करने की आवश्यकता नहीं है।

24.एक अन्य पहलू जिसकी जांच की जानी चाहिए वह यह है कि सिविल न्यायालय की न्यायिक समीक्षा की शक्ति की सीमा क्या है। क्या सिविल कोर्ट अपील की अदालत के रूप में कार्य करता है और इस प्रकार, एक अपीलीय प्राधिकारी के रूप में निर्णय ले सकता है और अधिनियम के तहत प्राधिकारियों की शक्तियों का प्रयोग कर सकता है या केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया की जांच करेगा?

25.यह सर्वविदित है कि न्यायिक समीक्षा का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया में कमी तक ही सीमित है, निर्णय तक नहीं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, **भारत संघ और अन्य बनाम के.जी. सोनी (9)** [5]मामले में ऐसे पहलू से निपटते समय निम्नलिखित को माना है: -

"14। इन सभी निर्णयों में आम बात यह है कि अदालत को प्रशासक के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि यह अतार्किक न हो या प्रक्रियात्मक अनौचित्य से ग्रस्त न हो या न्यायालय की अंतरात्मा को इस अर्थ में चौकने वाला न हो कि यह तर्क या नैतिक मानकों की अवहेलना थी। एसोसिएटेड प्रोविंशियल पिक्चर हाउसेस लिमिटेड बनाम वेडनसबरी कॉरपोरेशन, (1948) 1 केबी 223 में जो कहा गया है उसे ध्यान में रखते हुए न्यायालय प्रशासक द्वारा चुने गए विकल्प की शुद्धता पर

---

(9) (2006) 6 एस.सी.सी. 794

विचार नहीं करेगा जो विकल्प उसके लिए क़ानूनी रूप से खुले हुए हैं व अदालत को अपने फैसले को प्रशासक के फैसले से प्रतिस्थापित नहीं करना चाहिए। न्यायिक समीक्षा का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया में कमी तक सीमित है, न कि निर्णय तक।"

26.**बचन सिंह बनाम भारत संघ और अन्य (10)**में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय भी ऐसा ही है जिसमें निम्नलिखित प्रभाव डाला गया है:-

"...यह सुप्रसिद्ध और सुस्थापित क़ानून का प्रस्ताव है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कार्यवाही में, उच्च न्यायालय जीसीएम द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों पर अपील की अदालत के रूप में नहीं बैठ सकता है। संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायिक समीक्षा निर्णय के विरुद्ध निर्देशित नहीं है बल्कि निर्णय लेने की प्रक्रिया तक ही सीमित है। न्यायिक समीक्षा कोई अपील नहीं है बल्कि निर्णय लेने के तरीके की समीक्षा है। न्यायालय केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया की शुद्धता पर निर्णय देता है, न कि निर्णय की शुद्धता पर।"

इस प्रकार, सभी कोणों से अपीलकर्ता के मामले की जांच करते हुए हम संतुष्ट हैं कि जीसीएम में कोई अनियमितता या अवैधता नहीं थी, जिसे सेना पदानुक्रम में बहुत उच्च रैंक रखने वाले अधिकांश योग्य सदस्यों द्वारा निष्पक्ष और उचित तरीके से संचालित किया गया था।

27.**राजा राम पाल बनाम माननीय अध्यक्ष, लोकसभा और अन्य (11)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की खंडपीठ ने निष्कर्ष निकाला कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग निम्नलिखित के लिए किया जा सकता है: -

"431. (a) से (t) xx xx xx

(u)किसी निर्णय को अंतिम रूप देने वाला एक निष्कासन खंड आम तौर पर निर्णय की समीक्षा करने की अदालत की शक्ति को बाहर कर देता है, लेकिन अधिकार क्षेत्र की कमी या किसी कारण से अशक्त है जैसे कि घोर अवैधता, तर्कहीनता, संवैधानिक उल्लंघन जनादेश, दुर्भावनापूर्ण या प्राकृतिक न्याय के नियमों का अनुपालन करना और विकृति के आधार पर नहीं।"

28.उपरोक्त उल्लिखित निर्णयों के मद्देनजर, सिविल न्यायालय केवल अधिकार क्षेत्र की कमी या उसके शून्य होने के आधार पर ही अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर सकता है जैसे घोर अवैधता, अतार्किकता, संवैधानिक आदेश का उल्लंघन, दुर्भावना, गैर- प्राकृतिक न्याय और विकृति के नियमों का अनुपालन।

---

(10) (2008) 9 एस.सी.सी 161

(11)(2007) 3 एस.सी.सी 184

उक्त आधारों में से कोई भी वर्तमान मामले में आकर्षित नहीं होता है जो सिविल न्यायालय द्वारा न्यायिक समीक्षा के अभ्यास की गारंटी दे सकता है।

29. नतीजतन, ऊपर उल्लिखित कानून के महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर अपीलकर्ताओं के पक्ष में और प्रतिवादी-वादी के खिलाफ दिया गया है

30.परिणामस्वरूप, वर्तमान अपील की अनुमति दी जाती है। निचली अदालतों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को रद्द कर दिया जाता है और वादी द्वारा दायर मुकदमा खारिज कर दिया जाता है।[7]

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

बेनिका

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

हरियाणा

.